International Journal of Multidisciplinary Education and Research
ISSN: 2455-4588; Impact Factor: RJIF 5.12
Received: 07-11-2019; Accepted: 08-12-2019
www.educationjournal.in
Volume 5; Issue 1; Jan 2020; Page No. 32-35

अपराध की समाजषास्त्रीय अवधारणा का दुर्खीम के सदर्भ में व्याख्यात्मक अध्ययन

सतीष कुमार
स्वतंत्र शोधार्थी, समाजषास्त्र, बरवाला जिला हिसार, हरियाणा, भारत

सारांश
अपराध एक सामाजिक समस्या है, जो समाज के लिए हानिकारक है। समाज के द्वारा अपराध को समाप्त करने के प्रयास किये जाते हैं। परन्तु अपराध अपना रूप बदल लेता है और समाज से समाप्त नही होता है। प्रसिद्व समाजषास्त्री दुर्खीम अपराध को समाज में एक सामान्य और प्रकार्यवादी मानते है। अपराध के सामान्य पहलू को समझाते हूए कहते है कि समाज अपराध से मुक्त नही हो सकता है, क्योकि समाज में विभिन्न चेतना के व्यक्ति होते है। जिसके कारण कुछ व्यक्ति समाज के नियमों के विपरित आचरण करते है। जिन आचरणों को समाज ने अपराध परिभाषित कर रखा है। दुर्खीम अपराध के प्रकार्यवादी पहलू को समझाते हूए कहते है कि अपराध सामाजिक परिवर्तन के लिए आवष्यक पूर्वापेक्षित दषा है। उनका मानना है कि कई बार नकारात्मक विचलन भी समाज के लिए आवष्यक होता है। वे महान दार्षनिक सुकरात के उदाहरण से समझाते हूए कहते है कि उनका अपराध विचारो की स्वतंत्रता था जो उस समय में अपराध था। परन्तु उनका यह अपराध युनान के समाज के परिवर्तन के लिए महत्वपूर्ण साबित हुआ। दुर्खीम के अनुसार अपराध समाज में समाजिक परिवर्तन के लिए आवष्यक है और एक निरंतर बनी रहने वाली सामाजिक समस्या है। वे कहते है कि अपराध समाज के लिए नकारात्मक भी है और सकारात्मक भी है। अतः अपराध समाज का अंग बन चुका है।

मुख्य शब्दः अपराध, नैतिक चेतना, सामान्य व्यवहार, प्रकार्यवादी

प्रस्तावना
समाज में अपराध उतना ही प्राचीन है, जितना समाज प्राचीन है। इस प्रकार अपराध समाज में प्राचीन समय से लेकर वर्तमान समय तक विधमान् रहा है तथा आगे भी विधमान् रहेगा। परन्तु प्राचीन समय में आज की अपेक्षा कम अपराध होते थे। आधुनिक समय में उद्योगो के कारण समाज में हूए परिवर्तनों से अपराध में वृद्वि हूई है। जिसके कारण मनौविज्ञानिकों, समाजषास्त्रियों तथा अपराधषास्त्रियों ने अपराध के अध्ययन पर जोर दिया है। व्यक्ति अपराध क्यों करते है ? इस प्रष्न को जानने की कोषिष की तथा अपने–अपने मतानुसार उपर्युक्त प्रष्न का उतर दिया है। परन्तु सभी विद्वान एक मत नही है। अपराधषास्त्रियों का मानना है कि अपराधी जन्म जात होते है तथा समाजषास्त्रियों का मानना है कि अपराधी समाज द्वारा बनाए जाते है और मनौविज्ञानिकों का मानना है कि अपराधी मानसिक विकार द्वारा बनते है। इस प्रकार उपर्युक्त विद्वानों के भिन्न–भिन्न मत होते हूए भी अपराध को मुख्यतः समाज की ही उपज माना जाता है। क्योंकि अपराधी जन्मजात होते तो उनकी अलग पहचान हो सकती थी तथा वे प्राचीन समय में भी आज की समान ही होते। और यदि बात करे मानसिक विकार के अपराधियों की तो उन्हें भी रोका या सम्भाला जा सकता था। परन्तु समाज के द्वारा बनाए गए अपराधी को रोकना मुष्किल है क्योंकि वे अपराध को न तो आंनुषविकता के कारण करते है तथा न ही मानसिक विकार के कारण करते है। वे तो समाज के सचेत व्यक्ति होते है। जो जानबुझकर या सामाजिक दबाव के कारण अपराध करते है। ऐसे अपराधी अधिकतर व्यक्तिगत स्वार्थ के कारण ही अपराध करते है। ऐसे अपराधियों को दण्डात्मक कानून के द्वारा ही नियन्त्रित या कम किया जा सकता है। परन्तु आधुनिक औद्योगिक समाजों में सभी व्यक्ति केवल अपने व्यक्तिगत स्वार्थ को ही पूरा करना चाहते है। वे सामूहिक स्तर पर भावनात्मक रूप से अपराधी के विरोद्ध में कोई भी प्रक्रिया नही करते हैं। जटिल समाजों में अपराध के नियन्त्रण के लिए राज्य के द्वारा औपचारिक अभिकरण जैसे पुलिस, व कानून एवं न्यायलय आदि बनाए गए है। जो मुख्यतः अपराध को कम एवं नियन्त्रण में महत्वपूर्ण भुमिका निभाते है। परन्तु कई बार ये अभिकरण ही व्यक्ति को अपराधी बनाने के लिए उतरदायी बन जाते है। जैसे पुलिस कई बार निर्दोष व्यक्ति को अपने व्यक्तिगत स्वार्थ या राजनैतिक दबाव के कारण दोषी बना देते है। हमारी कठोर न्याय प्रक्रिया के कारण व्यक्ति अपने आपको निर्दोष साबित नही कर पाता है। जिसके कारण वह बिना अपराध किये ही सजा पाता है जिसके परिणामस्वरूप वह समाज या देष के प्रति बदले या प्रतिषोध की भावना से ग्रस्त होकर एक अपराधी बन जाता है।

उद्देष्य
- अपराध एवं अपराधी प्रवृति के बारें अध्ययन करना ।
- अपराध के बारें में प्रसिद्ध समाजषास्त्री दुर्खीम के विचारों का अध्ययन करना।

शोध क्रिया विधि
प्रस्तुत शोध पत्र में विषय से सम्बंधित तथ्यों के संकलन के लिए द्वितीयक स्त्रोतों जैसे– पुस्तक, पत्रिकों, शोध ग्रन्थों तथा इंटरनेट आदि से अध्ययन किया गया हैं। और विष्लेषणात्मक एवं व्याख्यात्मक पद्धति का प्रयोग किया है।

अपराध का समाजषास्त्रीय सिद्धान्त
अपराधषास्त्रीयों एवं जीवनषास्त्रीयों और मनोवैज्ञानिकों आदि के विपरीत समाजषास्त्री अपराध को पर्यावरण में परिचालन करने वाले सामाजिक तत्वों की उपज के सदर्भ में देखते है। वे अपराधियों को सामाजिक–सांस्कृतिक पर्यावरण से पृथक् असामान्य व्यक्तियों का समूह न मानकर समाज के सामाजिक–सांस्कृतिक संगठन से प्रभावित तत्व समझते है। दूसरे शब्दों में, समाजषास्त्रीय सम्प्रदाय के अनुसार अपराध सामाजिक पर्यावरण की उपज है तथा यह सीखा हुआ व्यवहार है। इसे सीखने की प्रक्रिया वैसी ही होती है जैसी साधारण व्यवहार के सीखने की होती है। ''लैकासाने का कहना है कि अपराध में प्रमुख तत्व सामाजिक पर्यावरण है तथा पर्यावरण वह ऊष्मा है जो अपराधिता का अभिजन करती है। अपराधी एक अणुजीव है जो तब तक महत्वहीन है जब तक वह उस तरल पदार्थ से नही मिलता जो उसे उभरने योग्य बनाता है। जिस प्रकार अणुजीव

जन्म के समय विषहीन होता है किन्तु जैसे–जैसे बढता है वह जहरीला होता जाता है, यंहा तक कि उसका एक डंक व्यक्ति की मृत्यु तक कर सकता है, इसी प्रकार व्यक्ति भी ऐसे ही अपराध सीखता है। जन्म के समय वह अपराध के बारें में कुछ नही जानता किन्तु सामाजिक पर्यावरण में धीरे–धीरे विभिन्न प्रकार के लोगों के सम्पर्क में आकर अपराध सीखता है''।[1] अपराध के प्रति आधुनिक समाजषास्त्रीय दृष्टिकोण की जडें उन्नीसवी शताब्दी के आरम्भिक दो दसकों में दुर्खीम, बोगर शां और मैके आदि विद्वानों के लेखों व रचनाओं में मिलती है। 1912 में दुर्खीम ने कहा कि अपराध सामाजिक उद्विकास की एक स्वाभाविक एवं अवष्यम्भावी घटना है। हम यहा पर अपराध की समाजषास्त्रीय अवधारणा का दुर्खीम के सदर्भ में व्याख्यात्मक अध्ययन करेगें तथा अपराध की समाजषास्त्रीय अवधारणा पर दुर्खीम के विचारों का व्याख्यात्मक अध्ययन करने से पहले दुर्खीम के जीवन परिचय पर एक नजर डालेगें।

जीवन परिचय

इमाइल दुर्खीम का जन्म 15 अप्रैल 1858 को फ्राँस के पूर्वी क्षेत्र के प्रांत लोरों में एपीनल नामक स्थान में हुआ। दुर्खीम यहूदी थे। उनके पिता तथा पूरा खानदान ही यहूदी धार्मिक परोहितों का यानी रब्बी का था। आरंभ में दुर्खीम यहूदी रब्बी बनना चाहते थे। 14–15 वर्ष की आयु में धार्मिक जीवन से उनका मोहभंग हो गया परन्तु धर्म के विष्लेषण में उनकी रूचि बनी रही। वे एक प्रतिभाषाली छात्र थे। उनके पिता इतने सामर्थ्यवान थे कि उन्हें अच्छे स्कूल में षिक्षा दिलवा सकें। दुर्खीम ने तीसरे प्रयास में फ्रांस के बौद्धिक अभिजन के शैक्षिक संस्थान इकॉल नार्मल सुपीरियर में प्रवेष कर लिया। परन्तु वे इकॉल से सन्तुष्ट नही थे। यहां से पास होने के बाद वे एक षिक्षक बने और नैतिकता एवं समाज संबंधी विषयों को पढाने लगे। विधिवत रूप से फ्रांस में समाजषात्र का अलग विभाग का आरंभ 1913 में ही हुआ परंतु दुर्खीम ऐसा प्रयास बहुत पहले से ही कर रहे थे। 1887 में उनकी नियुक्ति बोर्दोक्स विष्वविद्यालय में हो गई जहाँ वे दर्षनषास्त्र, षिक्षाषास्त्र और समाजविज्ञान पढाने लगे। उनका वैवाहिक जीवन अन्य समाजषास्त्रियों जैसे कार्ल मार्क्स और मैक्स वेबर के समान त्रासद नही था। उनकी पत्नि लुई ड्राइफस घरेलू एवं समझदार महिला थी। उनके एक पुत्र आंद्रे व एक पुत्री मैरी थी। प्रथम विष्व युद्ध में पुत्र आंद्रे की मृत्यु के दुःख में 15 नवंबर 1917 में उनका देहांत हो गया।[2]

अपराध

समाजषास्त्री अपराध को विचलनकारी व्यवहार का विषिष्ट स्वरूप स्वीकार करते है। यह एक ऐसा विचलनकारी व्यवहार है जो कि सामूहिक हित के लिए हानिप्रद है। इसलिए समाज ने इसे अमान्य एवं दण्डनीय घोषित कर रखा है। अन्य शब्दों में, अपराध सामाजिक रूप से अस्वीकृत या ऐसा व्यवहार है, जो कि समूह द्वारा निर्धारित आचरण प्रतिमानों के प्रतिकूल है। इस प्रकार अपराध समाजषास्त्रीय रूप में सामाजिक रिति रिवाजों, प्रथाओं, मुल्य मान्यताओं और नियमों का उल्लंघन है। अपराध के अर्थ को और स्पष्ट रूप से समझने के समाजषास्त्रीयों और अपराधषास्त्रीयों द्वारा दी कुछ परिभाषाओं का हम आगें अध्ययन करेगे है।

1. **गिलिन के अनुसार** :– अपराध एक ऐसा कार्य है, जो कि वास्तव में समाज के लिए हानिप्रद प्रदर्षित हो चुका है या लोगों के एक ऐसे समूह के द्वारा हानिप्रद स्वीकार किया जाता है। जिसके पास अपने विष्वास को लागू करने की शक्ति है तथा वह ऐसे व्यवहार को सकारात्मक दण्डविधानों के अंर्तगत निषिद्ध करता है।[3]
2. **दुर्खीम के अनुसार** :– अपराध एक ऐसा कार्य है, जो सामूहिक अन्तरात्मा (चेतना) की सुदृंड और सुस्पष्ट स्थितियों पर आघात करता है, दंड उद्देगात्मक सन्तुलन की पुनः प्राप्ति की आवष्यकता का परिणाम है।[4]

उरोक्त परिभाषाओं के अध्ययन से यह पता चलता है कि अपराध एक ऐसा व्यवहार या कार्य है जो समाज के लिए हानिकारक है। तथा ऐसा व्यवहार या कार्य करने वाले के लिए समाज द्वारा दंड देने की शक्ति या दंड देने का विधान है।

अपराध के कारणों से सम्बन्धी दुर्खिम का सिद्धान्त

इमाइल दुर्खीम समाज में अपराध के प्रमुख कारण समाजिक सुदृढता और अप्रतिमानता (एकीकरण एवं नियन्त्रण) को मानते है। वे अपनी पुस्तक 'समाज का श्रमविभाजन (1893) में समाजिक सुदृढता और अप्रतिमानता की अवधारणा व्यक्त करते है तथा समाजिक सुदृढता के दो प्रकार मषीनी सुदृढता और सावयवी सुदृढता का वर्णन करते है।[5]

1. **मषीनी सुदृढताः** दुर्खीम ने पुराने समाज को सरल समाज कहा है जिसमें मषीनी सुदृढता होती है। उन्होनें मषीनी सुदृढता का आधार सामाजिक एवं भौतिक जीवन की समानता, जनमत और धर्म मानते है। मषीनी सुदृढता को समझाने के लिए उन्होने एक सादृष्य प्रस्तुत किया है जिसमें अकार्बनिक तत्वों में अणुओं की समानता होती है और वह समानता ही उनके एक साथ जुडे होने का कारण है। पुराने समाजों में सुदृढता व्यक्तियों के एक जैसा होने के कारण एवं समान होने के कारण होती थी। उनका जीवन एक जैसा होता था। उनके व्यक्तिगत लक्षण अविकसित होते थे। सभी जनमत से बँधे होते थे। धर्म के कारण यानी ईष्वरीय अभिषाप के भय से लोग एक जुट होते थे। ये सभी कारक बाहरी तथा अनौपचारिक है। इसलिए सुदृढता एवं एकता मषीनी होती है। तथा पुराने समाजों में दमनात्मक कानून था। दमनात्मक कानून उस व्यक्ति को गंभीरता से दण्डित करता था जो प्रथा या कानून को तोडता था। ऐसा कानून हाथ के बदले हाथ और आँख के बदले आँख के सिद्धान्त पर आधारित होता है। इसलिए समाज के लोग प्रथा या कानून के किसी भी उल्लघंन का बहुत सख्ती से विरोध करते है।[6] सामाजिक एवं भौतिक जीवन की समानता से समाज में सभी व्यक्तियों की स्थिति एक समान होती थी। जिसके कारण वे विरोध नही करते थे या समाज के सामान्य नियमों का उल्लघंन नही करते थे। अतः पुराने समाजों में अपराध की मात्रा या दर कम होती थी।
2. **सावयवी सुदृढताः** आधुनिक समाजों को उन्होनें जटिल समाज कहा जिसमें सावयवी सुदृढता होती है। उन्होनें मषीनी सुदृढता का आधार सामाजिक एवं भौतिक जीवन की समानता, जनमत और धर्म बताया है। जोकि आधुनिक जटिल समाज में ये तीनों चीजें नही हैं, अथवा कमजोर स्थिति में है। आधुनिक समाज में श्रमविभाजन सामाजिक सुदृढता का आधार है। ये दोनों प्रकार के समाज और उनकी मषीनी और सावयवी सुदृढताएँ एक ही उद्विकासवादी श्रृंखला से जुडी है। सावयवी सुदृढता का अर्थ है एक जीव के विभिन्न अंगों की स्वाभाविक सुदृढता। औद्योगिक जटिल समाजों यह सुदृढता श्रमविभाजन के कारण व्यक्तियों की आंतरिक इच्छा से स्वाभाविक रूप से प्रेरित होती है। लोग अपने मन से एकता करते है क्योंकि ऐसा करना उनके हित में है। उनके लिए स्वाभाविक इच्छा का परिणाम होता है। तथा औद्योगिक समाजो में सुधारवादी या उपचारी कानून होता है। इस कानून में उल्लंघनकारी को गंभीर दंड नहीं दिया जाता है। उसमें बदले या प्रतिषोध का भाव नहीं होता है। दुर्खीम ने स्वीकार किया कि औद्योगिक

समाजो में भी कुछ दमनात्मक उपाय है जैसे मृत्युदंड, परंतु अब बहुत शक्तिषाली और दमनात्मक समान नैतिकता नहीं है। समाज का अधिकांष भाग अब कानून का उल्लंघन करने पर भावनात्मक रूप से प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं करता है। औद्योगिक समाजों में कानून की रखवाली का कार्य विषिष्ट संस्थाएँ और अभिकरण करते है।[7] सामाजिक एवं भौतिक जीवन की असमानता से समाज में सभी व्यक्तियों की स्थिति असमान होती है। जिसके कारण वे एक दूसरे का विरोध करते है या समाज के सामान्य नियमों का उल्लघंन होते है। औद्योगिक समाजों में व्यक्ति स्वार्थी होता है। समाज से उसे कोई लगाव नही होता है। समाज के नियमों का उल्लघंन करने में बिल्कूल भी नही हिचकीता और डरता है। अतः औद्योगिक समाजों में अपराध की मात्रा या दर अधिक होती है।

3. **अप्रतिमानता अथवा एनॉमी** :– दुर्खीम ने अप्रतिमानता व एनॉमी की अवधारणा अपनी पुस्तक समाज में श्रमविभाजन (1893) में व्यक्त कि थी। उनके अनुसार एनॉमी की परिस्थिति लक्ष्यों पर नियन्त्रण टूट जाने के कारण उत्पन्न होती है। जिससे व्यक्ति की आकांक्षायें असीमित हो जाती है। ये असीमित आकांक्षाएँ विचलित अथवा सामाजिक नियमों से सामूहिक विगत व्यवहार के लिए निरन्तर दबाव उत्पन्न करती है। इस प्रकार एनॉमी एक वह स्थिति बताई जा सकती है, जिसमें समाज के सामूहिक नियम व्यक्तियों की क्रियाओं को नियन्त्रित करने में असफल होते है। दुर्खीम के अनुसार जब व्यक्ति की आकांक्षायें असीमित हो जाती है और उन आकांक्षाओं पर कोई नियन्त्रण नही होता तथा उनकी पूर्ति असम्भव होती है। तो व्यक्ति में व्याकुलता उत्पन्न होती है।[8] दुर्खीम ने असीमित आकांक्षाओं की उत्पति के दो कारण दिये है।

(क) आर्थिक संकट :– आर्थिक संकट से जो सामाजिक स्थिति में आकस्मिक परिवर्तन उत्पन्न होते है। वे स्थिति–भ्रान्ति की भावना पैदा करते है। जिसमें सम्भव और असम्भव तथा उपयुक्त और अनुपयुक्त के बीच सीमा मालूम नहीं होती है। तीव्र औद्योगिक विकास तथा काम में न लाये गये विषाल मार्केट का अस्तित्व भी धन–सग्रह की सम्भावना को अपरिमित बनाते है व लोभ की भावना पैदा करते है जिससें धन, प्रतिष्ठा व शक्ति–सम्बन्धी लक्ष्य असीमित हो जाते है। बहुत महत्वकांक्षी होने से व्यक्ति बेचैन हो जाते है तथा उनके असंख्य लक्ष्य समाज के व्यवस्थापिकीय उपकरणों पर दबाव डालते है क्योंकि वे समाज मे प्रचलित नियमों द्वारा बँधे नहीं रहते।[9] आर्थिक संकट से जो सामाजिक स्थिति में परिवर्तन होता है व्यक्ति उस सामाजिक स्थिति को पुनः पहले जैसी करना चाहता है और उसके लिए वह अपराध तक करने को तैयार हो जाता है।

दुर्खीम की इस ऍनामी की अवधारणा को निम्न रेखाचित्र द्वारा समझाया जा सकता है–[10]

↓
बढता हुआ श्रम–विभाजन (सावयवी एकता)
↓
समाज के अंगों में अपूर्ण समन्वय
↓
सामाजिक समैक्य का घटना
↓
वर्गों में संघर्ष
↓
व्यक्तियों द्वारा एक–दूसरे के प्रति विरोधी उद्देष्य से कार्य करना व संभ्रान्ति का बढना
↓
सामाजिक व्यवस्था के विभिन्न तत्वों के पारस्परिक सम्बन्धों को नियन्त्रित करने वाले सामान्य नियमों का ह्रास
↓
नियम विहीनता' की स्थिति एवं ऍनाम

(ख) उद्योगवाद :– दुर्खीम के अनुसार औद्योगिक समाज में बच्चों पर दादा व पिता के व्यवसाय जबरदस्ती नही थोपे जाते है जिसके कारण औद्योगिक समाज में विषमस्तरीय व्यावसायिक गतिषीलता को बल मिलता है। और बच्चों को अपने मूल्य, योग्यता, कुषलता तथा विषिष्ट ज्ञान विकसित करने के अवसर मिलते है जो ऊँची स्थिति प्राप्त करने के साधन होते है तथा समाज में प्रतिस्पर्द्धा का सामना करने के लिए तैयार करते है। इस प्रकार औद्योगिक सामाजिक संरचनाएँ सामाजिक–पुरस्कारों को सभी व्यक्तियों के लिए समान रूप से उपलब्ध करती है तथा उनकी प्राप्ति की कोई सीमा निर्धारित नही करती, व्यक्तियों की आकांक्षाएँ शी असीमित हो जाती है। परन्तु इनमें से अधिकांष के प्राप्त न होने के कारण ऍनामी की परिस्थिति पैदा होती है।[11] इस प्रकार जब किसी की आकांक्षाएँ पूरी नही होती है तो वह समाज के नियमों का उल्लघंन करने में बिल्कूल भी नही हिचकीता और डरता है। क्योंकि उसे केवल अपनी आकांक्षाएँ पूरी करनी है इसके लिए उसे चाहे अपराध करना हो यह बात कोई अहमियत नही रखती है। जिसके कारण औद्योगिक समाज में अपराध की मात्रा या दर अधिक होती है।

अपराध के बारे में दुर्खीम के विचार :–

दुर्खीम का विचार था कि अपराध समाज में सामान्य और प्रकार्यवादी एवं सामाजिक परिवर्तन के अवष्यम्भावी है। वे कहते थे कि समाज में अपराध सदैव मौजूद रहा है और आगे भी रहेगा। अपराध केवल अपना स्वरूप बदलता है यह खत्म नही हो सकता। दुर्खीम के अपराध सम्बन्धी विचारों का वर्णन निम्नलिखित है।

1. **अपराध समाज में सामान्य हैं** :– अपराध के सामान्य पहलू को समझाते हूए दुर्खीम ने कहा कि कोई भी समाज अपराध मुक्त नही हो सकता हैं। समाज में सभी व्यक्तियों का समान होना और उनमें समान नैतिक चेतना पाना असम्भव है। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति की आनुवंषिक परिस्थितियाँ और सामाजिक प्रभाव अलग–अलग होते है, इसी कारण उनमें विभिन्न प्रकार की चेतना एवं मतभेद पाये जाते है। जिसके परिणामस्वरूप समाज में कुछ ऐसे व्यक्ति भी जरूर होगे जो सामूहिक प्रतिरूप से अलग होगे, इसलिए यह आवष्यक है कि इन विभिन्नताओं में कुछ अपराधी व्यक्ति भी शामिल हो। यह इसलिए नही कि उनकी क्रियाओं में कोई ऐसा अन्तर्निहित लक्षण है जो अपराधी है बल्कि इसलिए क्योंकि सामूहिकता उनकी क्रियाओं को अपराधी परिभाषित करती है। अतः अपराध सम्पूर्ण सामाजिक जीवन की मूल अवस्थाओं से बँधा होता हैं।[12]
2. **अपराध समाज में प्रकार्यवादी हैं** :– अपराध के प्रकार्यवादी पहलू को समझाते हूए दुर्खीम ने कहा कि अपराध सामाजिक परिवर्तन के लिए आवष्यक पूर्वापेक्षित दषा है। वे कहते है कि सामाजिक चेतना को यदि सकारात्मक विचलन की अनुमति देने के लिए लचीला होना चाहिए तो उसे नकारात्मक विचलन की अनुमति देने के लिए भी लचीला होना चाहिए। यदि विचलन को अनुमति नही दी जाए तो समाज गतिहीन हो जाएगा। '' व्यक्तियों के द्वारा अपने समाज की प्रगति के लिए रचनात्मकता अभिव्यक्त करनी चाहिए। यह रचनात्मकता उन आदर्षवादीयों को चाहिए जिनके स्वपन इस शताब्दी के मानव अनुभव से परे हो, और

उन अपराधियों भी चाहिए जो अपने समय के स्तर से निम्न है। एक रचनात्मकता दूसरे के बिना घटित नही हो सकती है। अपराध समाज को ऐसे परिवर्तनों के लिए तैयार करता है। दुर्खीम इस संदर्भ में महान सुकरात का उदाहरण देता है जिसका 'अपराध' उसकी विचारों की स्वतंत्रता था। यह बात उस समय प्रचलित कानून के अनुसार अपराध थी और इसके लिए उसे उपयुक्त दण्ड भी दिया गया था। परन्तु उसके अपराध ने एक नई नैतिकता एवं विष्वास को जन्म दिया जिनकी युनानियों को अति आवष्यकता थी क्योंकि वे जिन परम्पराओं में रह रहे थे वे परम्पराएँ उस समय की जीवन की स्थितियों के अनुकुल नही थी।''[13] अतः दुर्खीम का कहा है कि अपराधी को एक अस्वीकरणीय मावन के रूप में नही देखना चाहिए और न अपराध को एक ऐसी बुराई समझना चाहिए जिसे बहुत अधिक दबाया नहीं जा सकता ।

3. **अपराध** समाज में सदैव रहेगा :— दुर्खीम का कहा है कि प्राचीन काल से ही समाज में अपराध सदैव मौजूद रहा है और आगे भी रहेगा। क्योंकि समाज में एक समान चेतना के सभी व्यक्ति नही हो सकते हैं और उनमें कोई न कोई मतभेद अवष्य होगा जो सामूहिक रूप से अपराध माना गया होगा। कुछ ऐसे भी कार्य हो सकते है जो किसी समय विषेष में अपराध हो सकते है तथा समाजिक परिवर्तन के बाद वे कार्य अपराध न हो कर समान्य व्यवहार हो सकते है। और कुछ ऐसे भी कार्य हो सकते है जो किसी में समय विषेष समान्य व्यवहार हो तथा समाजिक परिवर्तन के बाद वे कार्य समान्य व्यवहार न हो कर अपराध हो सकते है। अतः इस प्रकार ''अपराध केवल अपना स्वरूप बदलता है यह खत्म नही हो सकता।''[14] अपराध एक सार्वभौमिक सामाजिक समस्या है। संसार में अपराध समय और स्थान के अनुसार कम और अधिक होता रहता है परन्तु अपराध सभी समाजों में हर समय विद्‌यमान रहता है।

आलोचनाएँ

अपराध के बारे में दुर्खीम के जो विचार थे। उनकी कुछ आलोचनाएँ भी है। जिनका हम निम्न बिन्दुओं में अध्ययन करेगें।

1. उनकी यह धारणा है कि अपराध सामाजिक मानदंडों को मजबूत करता है क्योंकि यह विरोधाभास है कि अपराध सामाजिक परिवर्तन कैसे ला सकता है। अगर अपराध के खिलाफ सामाजिक मानदंड सामूहिक रूप से मजबूत हो जाता है, तो यह कैसे हो सकता है ?[15]
2. दुर्खीम अपराध को समाज में सामान्य मानते है। जो एक आलोचना का विषय है क्योंकि एक ऐसे संसार की कल्पना करना कठिन है जो अपराध को समाज के सामान्य हिस्से के रूप में स्वीकार करता है।[16]
3. दुर्खीम का कहना है कि ''अपराध को बुराई नही मानना चाहिए और अपराधी को अस्वीकरणीय मानव के रूप में नही देखना चाहिए कहते है''[17] जो कि गलत है।

निष्कर्ष

संसार में अपराध एक सार्वभौमिक सामाजिक समस्या है, जो समाज के लिए हानिकारक है। व्यक्ति अपराध क्यों करते है ? कई विद्वानों ने इस प्रष्न के उतर देने की कोषिष की है। परन्तु सभी विद्वान एक मत नही है। अपराधषास्त्री अपराधी को जन्म—जात या आनुंषविक मानते है तथा समाजषास्त्री अपराधी को समाज द्वारा बनाया मानते है और मनौविज्ञानिक अपराधी को मानसिक रोगी मानते है। संसार में अधिकर अपराधी समाज के द्वारा ही बनाये जाते है। दुर्खीम अपराध को समाज का एक सामान्य हिस्सा और समाजिक परिवर्तन के आवष्यक एवं प्रकार्यवादी मानते है। अपराध के सामान्य पहलू को समझाते हूए कहते है कि समाज अपराध से मुक्त नही हो सकता है, क्योकि समाज में विभिन्न चेतना के व्यक्ति होते है। जिसके कारण कुछ व्यक्ति समाज के नियमों के विपरित आचरण करते है। जिन आचरणों को समाज ने अपराध परिभाषित कर रखा है। दुर्खीम अपराध के प्रकार्यवादी पहलू को समझाते हूए कहते है कि अपराध सामाजिक परिवर्तन के लिए आवष्यक पूर्वापेक्षित दषा है। उनका मानना है कि कई बार नकारात्मक विचलन भी समाज के लिए आवष्यक होता है। वे महान दार्षनिक सुकरात के उदाहरण से समझाते हूए कहते है कि उनका अपराध विचारो की स्वतंत्रता था जो उस समय में अपराध था। परन्तु उनका यह अपराध युनान के समाज में परिवर्तन के लिए महत्वपूर्ण साबित हुआ। दुर्खीम के अनुसार अपराध समाज में एक निरंतर बनी रहने वाली सार्वभौमिक सामाजिक समस्या तथा अपराध कभी समाप्त नही होता वह अपना रूप बदलता है। वे कहते है कि अपराध समाजिक परिवर्तन के लिए आवष्यक है और वे समाज में अपराध के प्रमुख कारण समाजिक सुदृढता और अप्रतिमानता (एकीकरण एवं नियन्त्रण) को मानते है। वे कहते हैं कि सरल समाजों में मषीनी समाजिक सुदृढता के कारण अपराध की दर कम होती है। क्योंकि दमनात्मक कानून व्यवस्था थी और लोग प्रथा या कानून के किसी भी उल्लघंन का बहुत सख्ती से विरोध करते है। जटिल समाजों में सावयवी समाजिक सुदृढता के कारण अपराध की दर अधिक होती है। क्योंकि सुधारात्मक कानून व्यवस्था थी और समाज का अधिकांष भाग अब कानून का उल्लंघन करने पर भावनात्मक रूप से प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं करता है। तथा जब समाज में नियन्त्रण की कमी होती हैं तो उस अवस्था को एनॉमी कहते है जिसमें अपराध में वृद्वि होती है। दुर्खीम की कुछ अलोचनाएँ भी है परन्तु फिर भी उनका सिद्धान्त अपराध को समझने के लिए महत्वपूर्ण है।

संदर्भ सूची

1. डॉ. एम. एम. लवानिया एवं शषी के. जैन : अपराधषास्त्र, रिसर्च पब्लिकेषन्स, 89, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर पृ. 59
2. मुजतबा हुसैनः समाजषास्त्रीय विचार ओरियट ब्लैकस्वॉन प्राइवेट लिमिटेड,1/24 आसफ अली रोड नई दिल्ली प्रथम संस्करण—2010 पृ. 98—99
3. डॉ. एम. एम. लवानिया एवं शषी के. जैन : अपराधषास्त्र, रिसर्च पब्लिकेषन्स, 89, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर पृ. 26
4. हरिकृष्ण रावतः समाजषास्त्रीय चिन्तक एवं सिद्धान्तकार, द्वितीय संस्करण, पुनः मुद्रण—1999 रावत पब्लिकेषन्स, जवाहर नगर, जयपुर, पृ. 122
5. Durkheim. Emile. [1984]. The Division of Labor in Society.Translated by W. D. Halls. New York: Free Press, 1893.
6. मुजतबा हुसैनः समाजषास्त्रीय विचार ओरियट ब्लैकस्वॉन प्राइवेट लिमिटेड,1/24 आसफ अली रोड नई दिल्ली प्रथम संस्करण—2010 पृ. 115—116
7. मुजतबा हुसैनः समाजषास्त्रीय विचार ओरियट ब्लैकस्वॉन प्राइवेट लिमिटेड,1/24 आसफ अली रोड नई दिल्ली प्रथम संस्करण—2010 पृ. 116—117
8. डॉ. एम. एम. लवानिया एवं शषी के. जैन : अपराधषास्त्र, रिसर्च पब्लिकेषन्स, 89, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर पृ. 70
9. डॉ. एम. एम. लवानिया एवं शषी के. जैन : अपराधषास्त्र, रिसर्च पब्लिकेषन्स, 89, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर पृ. 71
10. वही
11. ीजजचेरूध्ूजनजवतीनदजण्बवउधतमेवनतबमध्11800
12. राम आहूजा एवं मुकेष आहूजा : विवेचनात्मक अपराधषास्त्र रावत पब्लिकेषन्स, जवाहर नगर, जयपुर, पृ. 55
13. वही
14. Hamlin J. The Normality of Crime. Durkheim and

Erikson, Department of Sociology and Anthropology. UMD, 2009.
15. https://kpulawandsociety.wordpress.com/2012/10/18/durkheim-crime-serves-a-social-function/
16. Pavlich G. Law & Society Redefined. Don Mills, Ontario: Oxford University Press, 2011.
17. Durkheim. Emile. [1984]. The Division of Labor in Society. Translated by W. D. Halls. New York: Free Press, 1893.